चतुर्थ अध्याय

प्रभाकर माचवे जी के प्रमुख नायिकाप्रधान उपन्यासों की नायिकाओं का मानसिक अन्तर्द्वन्द्व

आभा का मानसिक अन्तर्द्वन्द्व -

तारा का मानसिक अन्तर्द्वन्द्व -

ऋता का मानसिक अन्तर्द्वन्द्व -

रीटा का मासिक अन्तर्द्वन्द्व -

लेखा का मानसिक अन्तर्द्वन्द्व -

विभा का मानसिक अन्तर्द्वन्द्व -

चतुर्थ अध्याय

प्रस्तावना --

मानसिक द्वंन्द्व :

दो विपरीत भावों और विचारों के एक साथ ही मानव हृदय पर अधिकार कर लेने के कारण जो संघर्ष, विकल्प, असमंजस, अन्तर्मन्थन का दृश्य उपस्थित हो जाता है, वही मानसिक द्वंद्व कहलाता है। द्वंद्व सारी सृष्टि के मूल में है। निर्णय की अनिश्चयात्मक स्थिति मानसिक अन्तर्द्वन्द्व के लिए कारणभूत रहती है। संघर्ष हमेशा दो परस्पर विरोधी तत्वों में होता है और वे तत्व जितने अधिक सशक्त और अकाट्य होंगे, उतना द्वंद्व अधिक संघर्षपूर्ण रहेगा।

मानसिक अन्तर्द्वन्द्व तब निर्माण होता है, जब कोई पात्र जीवन के किसी ऐसे मोड पर आ पहुँचता है, जहाँ उसके सामने परस्पर विरोधी दिशा में जानेवाले दो मार्ग आ पडे हो और वह परिस्थितिवश उन दोनों में से किसी एक पर चलने के लिए बाध्य हो, पर दोनों को समान रूप से उपयोगी व अनुपयोगी समझकर यह निश्चय न कर पाता हो कि किसे अपनाए और किसे छोडे, तब उसके मन में एक अकथनीय द्वंद्व छिड जाता है, जो उसे प्रतिक्षण बेचैन किए रखता है।"[१] इसप्रकार पात्र की अनिश्चयात्मक स्थिति का कारण एक ओर उसकी दृष्टि में दोनों मार्गों की समान उपयोगिता है, तो दूसरी ओर उसकी हिचकिचाहट का दूसरा कारण उसमें स्थित आत्मबल और इच्छाशक्ति की कमी भी हो सकता है। परिणामत: पात्र यह सोचता

१डॉ.रणवीर सिंग्रा - हिन्दी उपन्यास में चरित्र-चित्रण का विकास - पृ.क्र.७५।

है कि, इसमें से एक मार्ग अपनाने पर अमुक यह हानि उठानी पड़ेगी और तो दूसरे को अपनाने से उसे यह हानि उठानी पड़ेगी । इसप्रकार वह दोनों में से किसी एक प्रकार की हानि उठाने के लिए अपने आपको तैयार नहीं पाता । ऐसे पात्र अन्दर ही अन्दर घुलते रहते हैं और बड़ी देर के बाद अनमने भाव से किसी निश्चय पर पहुँचता है । ` उसकी क्रियाप्रतिक्रिया द्वारा ध्वनित परिस्थिति विशेष में उसका निश्चय भले ही दूसरों को असंगत प्रतीत हो, पर यदि उस निश्चय पर पहुँचने से पहले उसके मन में उठे घोर संघर्ष जनित क्लेश का पता चल जाए तो उस पात्र को समझाने में गलती, नहीं हो सकती ।[१] अत: अपने पात्रों के परस्पर विरोधी आचरण में संगति बिठाने के लिए उपन्यासकार अन्तर्द्वन्द्व का चित्रण किया करता है ।

अन्तर्द्वन्द्व उन्हीं पात्रों के भीतर छिड़ जाता है, जिनके पास जीवन और जगत के मूल्य स्पष्टत: नहीं होते और जो यह निश्चय नहीं कर पाते कि, किस बात को प्राथमिकता दी जानी चाहिए । जिनके पास प्रबल इच्छा शक्ति तथा आत्मबल होता है, वे पात्र अन्तर्द्वन्द्व से ग्रस्त नही होते ।

माचवे जी के उपन्यासों की नायिकाओं का मानसिक अन्तर्द्वन्द्व --

माचवे जी उपन्यासों में नायिकाओ का अन्तर्द्वन्द्व एक विशिष्ट परिस्थिति में उत्पन्न होता दिखाई देता है । उनके उपन्यासों की नायिकाएँ पाश्चात्य और भारतीय संस्कारों के अन्तर्द्वन्द्व से ग्रस्त हैं । आधुनिक जीवन की चुनौतियों को जब नारी स्वीकार करने लगी तभी उसके संस्कार दाम मन में नीति-अनीति, पवित्रता-अपवित्रता में द्वंद्व निर्माण होता गया । उपन्यासकार ने उपन्यासों की नायिकाओं का अन्तर्द्वन्द्व यथार्थवादी धरातल पर चित्रित किया है । पात्रों में अन्तर्द्वन्द्व छिड़ जाना यह स्वाभाविक ही है, क्योंकि जीवन के दोराहे पर आकर किस रास्ते की ओर मुड़ करें यह स्थिति निर्माण हो ही जाती है । अत: उपन्यासकार ने अपने पात्रों के परस्पर विरोधी आचरण में संगति बिठाने के लिए अन्तर्द्वन्द्व का चित्रण किया है । उनके-अन्द नायिकाप्रधान उपन्यासों की नायिकाओं का अन्तर्द्वन्द्व आगे प्रस्तुत किया जा रहा है --

---

१ डॉ. रणवीर रांग्रा - हिन्दी उपन्यास में चरित्र-चित्रण - का विकास - पृ.क्र.७५ ।

`द्वामा` की नायिका आमा का मानसिक अन्तर्द्वन्द्व --

`द्वामा` की नायिका आमा अपने पूर्व जीवन की स्मृतियों को भूलना चाहती है, लेकिन भूल नहीं पाती । बार-बार उसके मन में पूर्व-स्मृतियों के टुकडे जमा होते हैं । श्री से विवाह,उसका मादक सहवास और सुगंधित आश्वासन, विरह की लम्बी-लम्बी रातें आदि स्मृतियाँ आमा को उन आनन्दमय घडियों की गहरी याद दिलाते हैं । इसप्रकार की बीती यादों में खो जाना उसे अच्छा लगता है । क्योंकि अब वह परित्यक्ता का उदास जीवन बिता रही है और ऐसे दु:खमय क्षणों में वह अपने आनन्दमय अतीत में खोकर फिर एक बार उन बीते पलों की पुन:प्राप्ति का आनन्द वह स्मृतियों के द्वारा ही क्यों न हो, पाना चाहती है । लेकिन स्मृतियों की मेघमाला को वह हटाना भी चाहती है ,` जो भावना के आकाश को व्याप्त कर लेने वाली, बेमौसम की घटा थी । उसके आते ही आकाश - वातास का कोना-कोना जैसे आर्द्र हो उठता । हवा में जैसे दूर की सद्यस्नाता धरती की सोंधी गीली बास गूँज उठती, पपीहे की ` पी कहाँ` की पुकार केका के शत-सहस्त्र बर्हिनेत्र बन कर सप्रश्नता लिए नाचते .... `[१] लेकिन आमा दूसरे ही क्षण उसे अब सिर्फ कसक और टीस देनेवाली इन पूर्वस्मृतियों को अपने आपसे बिलकुल अलग करना चाहती है, क्योंकि उसे सुखमय अतीत याद करने से वर्तमान जीवन के दुखों का एहसास बडी ही तीव्रता से होने लगता है । इसलिए वह चाहती है कि अतीत की उन सुखमय घडियों को याद न करना ही ठीक है । इसलिए वह मन ही मन कहती है,` नहीं - नहीं, आमा कभी किसी की चल्नी नहीं रही । वह नहीं जानती किसी को आत्मसमर्पण करना । वह निरी निश्चल नयनों वाली पत्थर की प्रतिमा है, जिस पर बहुत सी बर्फ जमी है ।`[२] इसप्रकार आमा के मन में निरन्तर द्वंद्व चलता रहता है । इसलिए वह अपने पूर्व-जीवन की याद दिलानेवाले वे सब फोटो के अलबम, वे पत्र, वे कपडे और वे सारे उपहार सब जैसे कहीं किसी ` शेक `

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - द्वामा - पृ.क्र.६ ।

२ - वही - पृ.क्र.६ ।

के भीतर बन्द कर देती है। लेकिन उसका उच्छृंखल मन है कि, जो लाख मनाने पर भी सुनता नहीं।

अध्ययन के दौरान आभा का ध्यान मनु के इस श्लोक पर अटक जाता है —

` विशील: कामवृत्तो वा गुणैर्वापरिवर्जित :
उपचर्य: स्त्रिया साध्व्या सतत देववत्पति` [१]

और इन्हें पढ़कर आभा किताब गुस्से से दूर फेंक देती है। लेकिन यही आभा अपने उसी पत्नी के फोटो श्री प्रतिदिन अगरबत्तियाँ जलाकर पूजा करती है, जो उसे कन्यारत्न देकर, निर्दय बनकर छोड़ चला गया है। इसप्रकार पूजा के माध्यम से वह अपने बचपन के संस्कारों को दोहराती है। उसकी माता ने उसे तुलसी के चत्वर के पास उसे पूजा करना सिखाया था। पूजा करते समय माँ कहा करती थी,` पूजा कर्तव्य भावना से की जाती है। मुह उसमें चाहा नहीं जाता। सकाम पूजा का कोई फल नहीं होता।` आभा की माँ भी इसी तरह तिल-तिल गल-गलकर धरती से उठ गयी थी। आभा इसप्रकार की पूजा के माध्यम से हजारों वर्षों के पतिभक्ति एवं सतीत्व के संचित संस्कारों को दोहराती है। आभा के व्यक्तित्व का यह एक पहलू है, जो उसे पुरातन संस्कारों से छुटकारा नहीं पाने देता। लेकिन दूसरी ओर उसका विद्रोही मन हठ से मथ उठता। वह कहती है कि, क्या था उसका अपराध जो पति ने उसे छोड़ दिया ? पाँच बरस की कोमल बच्ची को छोड़कर जाते समय उसके मन में जरा-सा भी वात्सल्य भाव नहीं जागा। इसलिए आभा विद्रोही बनकर कह उठती है,` इस निष्प्राण तस्वीर को मैं अभी तक पूजती आ रही हूँ ? ..... उसी प्रतिमा को .... क्यों न उठाकर फेंक दूँ ? यह सब पूजा-अर्चा, यह सब युग-युग का छलावा, यह जन्म-जन्मान्तर की प्रवंचना, यह इकतर्फा ,प्रत्याशाहीन,प्रतिदान रहित निरन्तर देते ही जाना .... क्यों ? आखिर क्यों ? क्या नारी और नदी की यही एक-सी गति है ?` [३]

---

१ ` दुश्शील,कामी या दुर्गुणी कैसा भी पति क्यों न हो,साध्वी स्त्री को सतत पति को ईश्वर मानकर पूजना चाहिए।`
डॉ.प्रभाकर माचवे - द्वाभा - पृ.क्र.९।

२ डॉ.प्रभाकर माचवे - द्वाभा - पृ.क्र.११।

३ - वही - पृ.क्र.११-१२।

आमा अपने जीवन के अन्त तक बार-बार प्राचीन और आधुनिक मूल्यों के घेरे में आकर द्वंद्व से ग्रस्त हो जाती है। वह अपनी विवशतावश आधुनिक मूल्यों का अनुकरण नहीं कर पाती, तो दूसरी ओर प्राचीन संस्कारों से छुटकारा भी नहीं पा सकती।

`एकतारा` की नायिका तारा का मानसिक अन्तर्द्वन्द्व --

तारा अपने जीवन में आदर्श के लिए अपना जीवन न्योछावर करती है। आदर्श समाजवाद का उसका स्वप्न है। इसीके खातिर वह अपना घरबार छोड़कर अपनी सारी शक्ति समर्पित करती है। राष्ट्र-निर्माण के इस कार्य में उसे अपने(पुरुष) सहयोगी साथियों पर बड़ा भरोसा था। लेकिन उसका अपेक्षाभंग हो जाता है। अत: वह स्त्रीत्व के द्वंद्व से ग्रस्त हो जाती है कि, मैं जो कर रही हूँ, वह नैतिक है या अनैतिक ? उचित है या अनुचित ?

पुलिस की वॉरंट से घिरी तारा को पराए घर में, पराये मर्दों के साथ रात में छिप-कर बैठना पड़ता है। उसके जीवन में इस तरह का यह पहला ही अनुभव था। इसलिए उसके मन में पराये मर्दों के साथ रहने से एक ओर डर था, तो दूसरी ओर इस रहस्यमय और साहसिक अनुभव के प्रति कुतूहल भी था।`[१]` इन दो परस्पर विरोधी भावनाओं का संघर्ष उसमें चल रहा था।

तारा को दल के पुरुष सहकर्मियों के प्रति बहुत विश्वास था। अपने दल/दले में उसे सुरेश से बहुत आशा थी। लेकिन उसकी विमाता पुरुषों के प्रति अविश्वास दर्शाते हुए उसे बताती है कि,` सब पुरुष स्त्री की ओर एक ही नजर से देखते हैं - ..... आज तू भरम में है तारा, पर पुरुष के प्रेम के संगीत के कई तरह के साज होते हैं, स्त्री का प्रेम एकतारे की तरह है। उस एक तार को तोड दो, तो काठ बचा रहेगा। `[२]`

---

१ ` एक ओर इस अनुभव की रहस्यमयी साहसिकता के प्रति उसके मन में एक गुप्त-सुप्त कुतूहल था, तो दूसरी ओर डर।`
डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा - पृ.क्र.१।

२ डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा पृ.क्र.२२।

इस तरह तारा की विमाता पुरुष के प्रेम संबंध और नारी के प्रेम संबंधों में फर्क करते हुए यह स्पष्ट करती है कि, नारी के प्रेम में निष्ठा का महत्वपूर्ण स्थान होता है। लेकिन पुरुष के प्रेम में एकनिष्ठता का अभाव रहता है। वह हमेशा प्रसरवृत्ति का समर्थक रहता है। तारा अपनी विमाता की इन बातों पर विश्वास नहीं रखती। वह कहती है कि,` हमारे साथी उतने पतित नहीं हे, जितने आप समझाती है।` वे औरत की इज्जत करना जानते है।`[१] अनन्तर तारा जब घर से निर्वासित होकर सुरेश के पास आश्रय लेने हेतु पहुँचती है,तो वह जान जाती है, कि सुरेश उर्वशी नामक अभद्र महिला के साथ अश्लील हरकतें कर रहा है। यह देखकर उसका सुरेश के प्रति विश्वास टूट जाता है। उसके मन में यह द्वंद चलता है कि, क्या यह सच है कि,नारी के प्रेम में और पुरुष के प्रेम में फर्क है ? पुरुष के बारे में तो यह कहा जाता है कि, वह अनेक स्त्री प्रेम करनेवाला होता है। लेकिन स्त्री एक पतिव्रता होती है। स्त्री के प्रेम को जो` एकतारे ` की उपमा दी जाती है क्या वह सही है ? अर्थात् उसकी निष्ठा मात्र एक ही प्रेमी के साथ रहती है और जिसके टूटने पर उसके जीवन में शून्य बचा रहता है। लेकिन तारा के मन में इस रूढिगत संकल्पना के संबंध में द्वंद निर्माण हो जाता है। वह सोचती है कि क्या स्त्री के प्रेम के कई पर्याय नहीं होते कि, जिससे एक प्रेम-संबंध टूटने पर भी बहुत कुछ बचा रहे ? `[२] यह परम्परागत समाज मान्यता है

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - द्वामा - पृ.क्र.२२।

२ ` पुरुष उस वादक की तरह है कि,जिसके पास जल तरंग की सात कटोरिया हैं,इसराज के कई तार हैं, यूनानी वीणा के इक्कीस तार हैं। मगर स्त्री ? वह तो इकतारा है, जिसका तार टूट जाने पर काठ बचा रहता है।पर यह उपमा सचमुच ठीक है क्या ? क्या स्त्री वीणा नहीं है ? क्या काठ का भी वाद्य नहीं बनता ? `
डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा - पृ.क्र.२८।

कि स्त्री अन्तर्मुखी होती है और उसकी निष्ठा किसी एक ही के साथ हमेशा बँधी रहती है। लेकिन इसके विपरीत पुरुष बहिर्मुखी होता है, जो कभी भी एकनिष्ठता का अनुगामी नहीं बनता। एक साथ कई प्रेमसंबंध रख सकता है। तारा के मन में इसी परम्परागत संकल्पना के संबंध में द्वंद्व पैदा होता है।

तारा के मन में जयन्त के प्रति नितान्त आदर्शवादी विचार थे। इसलिए बड़े विश्वास के साथ वह कहती थी, 'दुनिया के सब पुरुष धोखा दे दे पर जयंत वैसा नहीं है। वह गंभीर, उदार, विवेकवान, सहानुभूतिपूर्ण, उसके प्रति पवित्र स्नेह रहनेवाला आदर्शवादी है।'[१] लेकिन सुरेश से निराश होकर जब वह जयन्त के पास आश्रय लेने पहुँचती है, तो वह भी तारा को डरा-धमकाकर, उससे अपनी वासना की पूर्ति करना चाहता है।'[२] अत: उसके मन में प्रश्न उठता है कि, क्या सभी पुरुष स्त्रियों को इसप्रकार डरा-धमकाकर उसे जीतना अपनाना चाहते हैं ? लेकिन तारा का दूसरा मन कहने लगता है कि, इनमें सिर्फ उन अकेले युवकों का दोष है ? क्या स्त्रियों का भी कुछ दोष नहीं है ? ताली एक हाथ से तो नहीं बजती।' परवाने के पंख झुलसते हैं, तो इसमें कुछ दीपक शिखा का भी दोष होता है या नहीं ? या वह सदा पवित्र, अकंप और स्थिरमति है ? सारी अस्थिरता क्या शलभ के ही भाग्य में है ?[३] इस

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा - पृ.क्र.२९।

२ ' मैंने अपने कठोर, भाग-दौड जीवन में, यह सुखद नारी स्पर्श न जाने कितने वर्षों में अनुभव किया है। कल सबेरे ही मैं चला जाऊँगा, फिर पता नहीं, तुम मिलो, न मिलो।...'
डॉ. प्रभाकर माचवे - एकतारा - पृ.क्र.३४।

३ डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा - पृ.क्र.३४।

तरह से तारा के मन में यह द्वंद्व चलता रहता है कि, ऐसी स्थितियों में दोष सिर्फ पुरुष जाति का ही है या स्त्री का भी कुछ सहभाग उसमें रहता है।

जयन्त हिमांशु की बातों में आकर तारा पर इसलिए सन्देह प्रकट करता है कि, वह रात में अकेली रसिकलाल के साथ रही थी। तारा इससे क्षुब्ध होकर सोचने लगती है, कि, जो जयन्त नारी को पुरुष के दास्यत्व से, रूढियों की कारा से मुक्त करने की बातें करता था, वही आज हिमांशु की बातों में आकर मुझपर सन्देह प्रकट कर रहा है ? क्या सभी पुरुष शंकालु होते हैं ? उसका एक मन तो जयन्त की गणना समुचि पुरुष जाति में ही करता है। लेकिन दूसरी ओर उसके मन में जयन्त की आदर्श प्रतिमा थी, जिसके कारण उसका मन यह कबूल नहीं करता कि जयन्त भी उसी पुरुष जाति का प्रतिनिधि है। इसलिए वह कहती है, `कि जयन्त तुम अन्य पुरुषों की तरह मेरी आंखों में नहीं थे, तुम कुछ और थे।`[१]

तारा के मन में देश के प्रति अपार प्रेम है। उसने अपना जीवन देश को स्वतंत्र बनाने में न्योछावर किया है। इसलिए वह अपनी सहेली को लिखे खत में कहती है, ` उस बडे प्रेम, सारे देश से प्रेम के बाद कौन-से प्रेम का अर्थ बचा रहता है .... व्यक्ति और व्यक्ति के बीच खिंचाव, आकर्षण, प्रेम, ममता सब है परन्तु उससे भी बडा है यह व्यक्ति के मन में समाज, समूह, राष्ट्र और दुनिया भर में प्रपीडित के प्रति प्रेम। इस प्रेम के अजीब जलप्रपात की विराट ध्वनि में और सब छोटे-छोटे साज खो गए हैं ...`[२] अर्थात् तारा यह स्पष्ट करना चाहती है कि उसे देशप्रेम के सामने अन्य प्रेम-संबंध, व्यक्ति-व्यक्ति के बीच का प्रेम, सब फीका लगता है। इसलिए उसने निर्मोही बनकर घर को त्याग दिया था। पिता के प्रेम से वंचित हुई थी। अत: वह अपने जीवन में किसी व्यक्ति के प्रेम से पूर्णत: वंचित थी। परिणामत: उसके दिल में अपने जीवन की इस अपूर्णता की पूर्ति करने की ललक भी है। उसका प्रेम से वंचित मन कहता है, ` पर उस सब के बाद भी - समुद्र की उत्ताल तरंगों में ज्वार के समय पास बैठ कर उसकी प्रचंड पछाड और टकराहट की रागिनी सुनने पर भी , वह क्या है, जो मन को अशांत

---

१ डो.प्रभाकर माचवे - एकतारा - पृ.क्र.३५।

२ - वही - पृ.क्र.४३-४४।

रखता है ? .... बहुत विराट वाद्य-संकुल भी सुना है --- परन्तु बारिश के बाद उस पार से कहीं से आनेवाली बंशी की आकुल तान का भी कुछ अपना ही आनन्द है।'[1] इसप्रकार विराट से मन मुग्ध जरूर होता है लेकिन मन नहीं भरता। तारा को एक ओर देश-प्रेम में अपना सबकुछ न्योच्छावर करने के बाद कामनापूर्ति का आनन्द होता है लेकिन व्यक्तिगत जीवन में प्रेम से वंचित हो जाने से अधूरेपन का एहसास होता है। तारा के मन में हमेशा इन दो वृत्तियों में द्वंद्व चलता रहता है। वह यह बात भी जानती है कि, इन दो वृत्तियों में सामंजस्य न हो पाना आज की दुनिया की सबसे बडी समस्या है।

तारा के मन में विवाह की बात को लेकर द्वंद्व पैदा होता है। एक ओर वह सोचती है कि क्या विवाह स्त्री जीवन के लिए आवश्यक है ?[2] तो दूसरी ओर वह विवाह को व्यक्ति के जीवन मार्ग में बाधा एवं रोडा मानते हुए कहती है कि, क्या विवाह स्त्री के जीवन में एक बडी जंजीर है ? तारा के इस कथन से स्पष्ट है कि, तारा में व्यापक हित को देखकर समुचित दृष्टि से विचार करने की प्रवृत्ति कम है। इसलिए वह किसी एक बात का एक ही पहलू देखती है तो दूसरा नजरअंदाज करती है। यहाँ विवाहित जीवन और अविवाहित जीवन के कई गुण और दोष एक साथ उसके ध्यान में आ जाते हैं। इसलिए उसके मन में द्वंद्व पैदा होता है।

'दर्द के पैबन्द' की नायिका सुता का मानसिक अन्तर्द्वन्द्व ---

भारतीय और पाश्चात्य देशों की विवाह-संबंधी मान्यताओं में मूलत: फर्क है। यहाँ विवाह को समर्पण माना जाता है, जिसमें पति-पत्नी की निष्ठा को महत्वपूर्ण समझा जाता है। त्याग, समर्पण इसका मूलाधार होता है। लेकिन पश्चिमी संस्कारों में भौतिकवादी दृष्टिकोण प्रमुख होने से उनमें एकनिष्ठता को उतना महत्व नहीं दिया जाता। अतएव उनमें विवाह-विच्छेदों की संख्या अधिक है। साथ ही वे बडी

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा - पृ.क्र.४५।

२ 'क्या वह उसकी मातृत्व-वृत्ति की, स्त्रीत्व की पूर्ति है ?
डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा - पृ.क्र.५१।

सहजता से फिर दूसरा विवाह संबंध भी स्थापित कर सकते हैं। इसप्रकार मूलत: ही इन दो संस्कृतियों में फर्क है। ऋता और रोबर्तो के विवाह से यही समस्या पैदा हो जाती है। ऋता भारतीय संस्कारों में पली हुई नारी है, लेकिन पश्चिमी युवक रोबर्तो के साथ वह विवाह करती है और उसका जीवन दर्द के पैबन्द बन कर रह जाता है।

ऋता उसके पति के छोड चले जाने के बाद कहती है कि,` डाक्टर के साथ फिर से बसने,या उनके दिल को जीतने या हृदयपरिवर्तन का तो प्रश्न ही नहीं उठता था। उनके साथ अब मेरा जीवन में कोई सम्बन्ध नहीं हो सकता था`[१]। एक ओर जहाँ वह आधुनिका बनकर इस प्रकार की विद्रोहात्मक प्रतिक्रिया व्यक्त करती है,वहीं उसके प्राचीन संस्कार उभरकर आते हैं और वह कहती है,` मेरा तो अब कोई देवता शेष नहीं था। महादेव को खोकर मैं अब उस खंडहर उमा मन्दिर की तरह हो गयी थी, जिसमें से देवता कूच कर गए हैं। जो केवल सोखला पडा है,प्राण उसमें की प्रतिष्ठा खो चुके हैं।`[२] भारतीय नारी सदियों से पति को देवता मानती आयी है। ऋता जो एक ओर पति से प्रवंचना पाने पर विद्रोहात्मक प्रतिक्रिया व्यक्त करती है, वही पति को देवता कहती है,कि जिससे छूटी जाने के बाद भी वह अपने जीवन में शून्यता महसूस करती है।

` दर्द के पैबन्द` की नायिका रीटा का मानसिक अन्तर्द्वन्द --

रीटा को जब राज से विवाह का प्रस्ताव मिलता है तब उसके मन में दो संस्कृतियों के विवाह की सफलता के संबंध में द्वंद निर्माण होता है। क्योंकि उसके सामने ऋता का उदाहरण है, कि ऋता का जीवन एक विदेशी के साथ विवाह करने से भयानक और कभी न सुधरनेवाला रोग बन गया था। इसलिए वह ऋता का उदाहरण देखकर जहाँ एक ओर कहती है कि,` क्या सभी दो संस्कृतियों के विवाह यों असफल हो जाते हैं ?[३] तो दूसरी ओर वह अन्य परिचितों के सफल उदाहरण देखकर वह कहती है,` क्या अनेक

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - दर्द के पैबन्द - पृ.क्र.८५।

२ - वही - पृ.क्र.८८।

३ - वही - पृ.क्र.१०९।

वाद्यों का मिल कर सुमधुर आर्केस्ट्रा नहीं बनता ? क्या सात रंगों का इंद्रधनुष नहीं होता ?' [१]

इस प्रकार उपन्यास की दोनों नायिकाएँ आधुनिक व पुरातन तथा पूर्वी एवं पश्चिमी संस्कारों के द्वंद्व से ग्रस्त हैं।

'लक्ष्मीबेन' की लेखा का मानसिक अन्तर्द्वन्द्व --

लेखा परित्यक्ता नारी है, लेकिन उसका यह पीडादायक जीवन अपना निर्माण किया हुआ नहीं है।'[२] उसके पति ने ही उसे त्याग दिया है। अन्यथा वह भी अपने पति और बच्चे को खूब चाहती थी। उसका यह स्वप्न था कि,अपना भी सुखी परिवार हो,जहाँ पति हो,बच्चे हो,घर हो,जिसमें उसे संतोष की प्राप्ति हो। लेकिन पतिद्वारा त्यागी जाने के बाद लेखा के ये सब सपने ध्वस्त हो जाते हैं। उसे गुजारा चलाने के लिए विवशतावश नौकरी करनी पडती है। लेखा के पारिवारिक दुखी जीवन में उसके व्यक्तित्व का दूसरा एक पहलू भी है,तो बाहरी दुनिया से अपना यह अवसाद,पीडा और दर्द छिपाने की कोशिश करता है। वह एक आधुनिका नारी है। इसलिए वह इन सब दुखों को भुलाकर जीना चाहती है। लेकिन उसके मन में वह दुख हमेशा बराबर खलता रहता है। इस तरह लेखा दोहरा जीवन जी रही है,जिससे वह हमेशा द्वंद्वग्रस्त हो जाती है।

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - दर्द के पैबन्द - पृ.क्र.१०९।

२ 'बेचारी लेखा ? क्या उसका दुख,उसका अपना निर्माण किया हुआ है ? या उसपर थोपा गया है ? क्या वह अपने बच्चे से जी - जान से प्यार नहीं करती थी ? क्या वह अपने पति से जी - जान से प्यार नहीं करती थी ? .... फिर -- इस दुख का कारण क्या है ?
डॉ.प्रभाकर माचवे - लक्ष्मीबेन - पृ.क्र.२८।

लेखा को, पति के छोड चले जाने से जीवन में जो यातनाएँ, दर्द मिला है उसके संबंध में वह सोचती है कि, क्या इससे कोई निस्तार नहीं है ? ` सहना ही होगा, सहते रहना ही होगा । जीवन एक असहनीय अभिशाप है क्या ? `[१] लेखा का अवसादपूर्ण मन यहाँ निराशावादी बनकर इसप्रकार का वक्तव्य करता है । लेकिन उसके व्यक्तित्व का दूसरा पहलू भी है जो उसे इसप्रकार के नियतिवादी तथा निराशावादी विचारों से बचाना चाहता है । इसी सिलसिले में वह अपने आसपास सामाजिक - सांस्कृतिक कार्यक्रमावलियों का जाल बुनकर रखती है ।

लेखा में दो तरह की आंतरिक, परस्पर विरोधी, खींचनेवाली शक्तियाँ कार्यशील हैं । एक ओर वह सोचती है कि, जीवन सोद्देश्य है, जीवन में हमारे संकल्प ही प्रधान हैं । तो दूसरी ओर वह सोचती है कि जीवन निरुद्देश्य है, हम सब नियति के हाथों के कठपुतले हैं ।`[२] इस प्रकार परस्पर विरोधी विचारधाराओं में हमेशा संघर्ष चलता रहता है । इन परस्पर विरोधी विचार धाराओं के साथ यह भी उतना ही सही है, कि लेखा उतनी और वही नहीं है, जो सामने दिखाई देती है ।` वह संकल्पवान स्त्री है । वह केवल नारी नहीं है, वह शक्ति भी है । नारी के नाते वह केवल श्रद्धा नहीं है, वह क्रांति भी है ।`[३] इसीलिए लेखा एक आधुनिका, संकल्पवान नारी होने से

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - लक्ष्मीबेन - पृ.क्र.२२ ।

२ ` जीवन में जीने का कोई उद्देश्य नहीं, जीवन सार्थक है, उसकी गति सोद्देश्य है । जीवन में कुछ भी अपने हाथ नहीं । सब पूर्वत: सुनिश्चित है, सुनियोजित है, नियति के हाथों में हम सब कठपुतले हैं । नहीं, जीवन में हमारा संकल्प ही प्रधान है....`
डॉ.प्रभाकर माचवे - लक्ष्मीबेन - पृ.क्र.२९ ।

३ - वही - पृ.क्र.२९ ।

वह अपनी व्यक्तिगत समस्याएँ, अकेलापन,उदासी और मायूसी भुला देना चाहती है। इसीप्रयास में वह विविध कार्यक्षेत्रों में विविध प्रकार के व्यवसाय में स्वयं को व्यस्त रखती है और अपने मन को शांति दिलाने का झूठा प्रयास करती है। जीवन में उसे कहीं भी संतोष एवं शांति की प्राप्ति नहीं होती। लेकिन वह अपने ही मन के साथ प्रतारणा करती रहती है। वह अपने आपसे (उसी लेखा से, जो पारिवारिक जीवन में नैराश्य आनेपर बाहरी जीवन में उस अपूर्णता की पूर्ति करना चाहती है, और उसमें असफल भी होती है।) सवाल करती है, 'किसलिए ये सब बहस मुबाहसे, यह वाद-विवाद, यह शब्दछल,ये लम्बे-चौड़े व्याख्यान, ये विद्वतापूर्ण वक्तृताएँ, यह लेक्चर बाजी, यह भाषणकला के सामिनय नमूने ? किस लिए ? ..... जीवन में आघात पर आघात। पति ने छोड दिया और जैसे जीवन के ऋतु-चक्र में से वसंत चला गया।'[१] परिवार जनों के प्रेम से वंचित मन उसे इसप्रकार का सवाल करता है।

'कहाँ से कहाँ' की नायिका विभा का मानसिक अन्तर्द्वन्द्व —

विभा ने बाहरी दुनिया में विभाजन की समस्या देखी है और स्वयं उसका परिणाम भी अनुभव किया है। उसे बार-बार इस प्रकार का अहसास होता है कि, उसका भी मन विभाजित है,भीतर ही भीतर वह कहीं काटी जा रही है।

बर्लिन के वास्तव्य में विभा का परिचय भारतीय युवक भास्कर से तथा जर्मन मित्र बिल से होता है। दोनों में कुछ समानताएँ भी थीं। विभा का मन बिल की ओर खिंचा जा रहा था, तो इधर भास्कर भी विभा से प्रभावित था। विभा दोनों से भी आकर्षित थी। अत: इसप्रकार की नाजुक स्थिति में पूर्व और पश्चिम में से किसे चुने इस संबंध में विभा के मन में द्वंद्व पैदा होता है।

विभा जर्मनी का जीवन सुविधापूर्ण और सुखद होते हुए भी, उस सुव्यवस्थित जीवन से स्वयं को नहीं जोड पा रही थी। इसका कारण यह था कि उसके मन की

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे – लक्ष्मीबेन – पृ.क्र.७४।

गहराई में कहीं भारतीयता के प्रति आसक्ति थी। उसे कुछ अभाव-सा महसूस हो रहा था। लेकिन उसे वह समझ नहीं पा रही थी। `कुछ ऐसी बात थी कि स्नेह की पारस्पारिक्ता की वह नि:स्वार्थ और निरपेक्ष भूख उसे भीतर ही भीतर कचोटती थी।`[१] इसी एहसास के साथ उसके मन में भास्कर, बिल, हान्स या ऐसे ही कई नवयुवकों की छवियाँ उभरती है, फिर मिटती भी हैं, मानों वे क्षण जीवी हों। उसे एक ओर लगता है कि वह अपनी माँ के सिवा अन्य किसी से स्थायित्व का रिश्ता नहीं जोड़ सकेगी, जिससे वह निरपेक्ष प्रेम पा सकेगी। माँ की ओर उसका मन खींचता जाता है। माँ को अकेला छोड़ कहीं भी जाने को उसका मन नहीं करता। लेकिन दूसरी ओर यौवन की पुकार थी और परिणामत: `यौवन के साथ अपने अधूरेपन का जैविक अहसास भी कहीं उभर रहा था।`[२] विभा के मन में द्वंद्व पैदा होता है। इसप्रकार एक ओर उसका मन सिर्फ वात्सल्य भाव की पूर्ति चाहता है, तो दूसरी ओर प्रणय-भावनाओं की पूर्ति चाहता है। लेकिन व्यक्ति के जीवन में दोनों की पूर्ति महत्वपूर्ण है। एक का पूर्णत: त्याग जीवन में अधूरापन ही है। दोनों प्रकार के प्रेम का अपना महत्वपूर्ण स्थान है।

पश्चिम में बढ़ते विवाह विच्छेद और विवाह संस्था के क्षणभंगुरत्व के संबंध में विभा सोचती है कि, बाइबल में तो लिखा था -- `विवाह स्वर्ग में घटित होते हैं। और जिनको भगवान ने एकत्र किया है, उन्हें भगवान ही एक-दूसरे से दूर कर सकता है।.....`[३] लेकिन आज वहाँ शास्त्र-वचन केवल बासी और निर्जीव वाक्य बनकर रह गये हैं। इसी पार्श्वभूमि में विभा भारत के विवाह मंत्र `नाति चरामि` के संबंध में कहती है कि, `एकनिष्ठता का वह मिथक सहस्त्र वर्षों से सती-सीता-सावित्री के आख्यानों से स्वप्न की तरह पाला-पोसा गया। क्या वह आज भी उतना ही, वैसा ही सच है?`[४] वर्तमान भारतीय समाज में भी वैवाहिक संबंधों की स्थिरता के प्रति संदेहास्पद स्थिति के कारण विभा के मन में इसप्रकार का द्वंद्व पैदा होता है।

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - कहाँ से कहाँ - पृ.क्र.२७।

२ - वही - पृ.क्र.२९।

३ - वही - पृ.क्र.६७।

४ - वही - पृ.क्र.६८।

वर्तमान भारत की विघटनात्मक स्थिति के संबंध में विभा के मन में ख्याल आता है कि, ` क्या विवेकानंद और रामकृष्ण, तिलक और अरविन्द का भारत आज का भारत नहीं है ? क्या आज का भारत केवल इकबाल और अम्बेडकर, जिन्ना और सावरकर का ही भारत है ? `[1] साथ ही इसमें और कई नेताओं जैसे -- मास्टर तारासिंह, रामस्वामी नायकर पेरियार और विविध ` सेनाओं ` के नेता लोग - आदि के भी नाम जोड सकते हैं। इसप्रकार भारत में विभाजन की बढती प्रवृत्ति देखकर विभा के मन में द्वंद्व पैदा होता है कि, ` विभाजन से एकता मजबूत होती है, या एकात्मकता से खंड-खंड मजबूत बनते हैं ? अंश अंशी पर निर्भर है या अंशी अंश पर[2] ? उत्तरोत्तर इन भूभागों के बढते विभाजन का परिणाम क्या होगा, यही सवाल विभा के मन को द्वंद्व ग्रस्त बना देता है।

निष्कर्ष---

विवेच्य उपन्यासों में नायिकाओं के अन्तर्द्वन्द्व का अध्ययन करने के बाद हम इस निष्कर्ष पर आ पहुँचते हैं कि, इन नायिकाओं के अन्तर्द्वन्द्व का यथार्थ एवं प्रभावशाली अंकन हुआ है। नायिकाओं के द्वंद्व के द्वारा इनका आंतरिक पक्ष उद्घाटित होता है। बाहरी व्यक्तित्व की अपेक्षा भीतरी व्यक्तित्व अपने में बहुत कुछ समाए हुए रहता है। इसीलिए तो कहा जाता है कि मानवचरित्र हिमनग (आईसबर्ग)के समान होता है, जिसका नवमांश ही जल के ऊपर रहता है और शेष पानी के भीतर छिपा रहता है। इसीको उद्घाटित करना उपन्यासकार में स्थित मनोविश्लेषक का महत्वपूर्ण काम रहता है। प्रस्तुत नायिकाओं के अध्ययन के बाद यह महसूस होता है कि, इस चुनौती का माचवे जी ने अत्यंत सहज ढंग से स्वीकार किया है।

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - कहाँ से कहाँ - पृ.क्र.८० ।

२ - वही - पृ.क्र.८० ।

` ड्रामा ` की आभा में निरन्तर प्राचीन एवं आधुनिक मान्यताओं का आन्दोलन चलता रहता है, जिसके कारण वह किसी एक मान्यता का अनुसरण नहीं कर पाती । वह आजीवन द्वंद्व से ग्रस्त है । उसके अन्तर्द्वन्द्व से उसका आंतरिक कमजोर पक्ष उद्घाटित होता है । ` एकतारा ` की तारा नैतिक - अनैतिक ,उचित-अनुचित तथा आदर्श और यथार्थ के द्वंद्व से ग्रस्त है । देशकार्य और विवाह के बीच उसका मन आन्दोलित होता रहता है । वस्तुत: दोनों बातें व्यक्ति के जीवन में आवश्यक हैं । अपने सहकर्मी साथियों के प्रति उसका विश्वास टूटता है और उसके मन में आदर्श और यथार्थ का द्वंद्व निर्माण होता है । ` दर्द के पैबन्द ` की ऋता के जीवन में पूर्व और पश्चिमी संस्कारों का द्वंद्व दर्द के पैबन्द निर्माण कर देता है । रीटा भी इसी प्रकार के द्वंद्व से ग्रस्त है, लेकिन उसकी विशेषता यह है कि, वह अपने जीवन में उचित मार्ग चुनने में कामयाब बन जाती है । ` लक्ष्मीबेन ` की लेखा परित्यक्ता नारी है, जो स्वयं दुखी एवं पीड़ित होने के बावजूद भी अपने बाहरी जीवन से अपना निराशामय अतीत छिपाने में व्यस्त है । वह जीवन की सोद्देश्यता एवं निरुद्देश्यता के द्वंद्व में पड़ जाती है । ` कहाँ से कहाँ ` की नायिका विभाजन की समस्या को लेकर अन्तर्द्वन्द्व से ग्रस्त है ।

प्रस्तुत विवेचन से यह स्पष्ट रूप से लक्षित होती है कि,प्राय: वैवाहिक जीवन की अस्थिरता ही इन नायिकाओं के अन्तर्द्वन्द्व की आधारभूमि रही है । अन्तर्द्वन्द्व के माध्यम से नायिकाओं के चरित्र के विविध आंतरिक पहलू उजागर करने में माचवे जी को बहुत अंश तक कामयाबी हासिल हुई है ।

••

उपसंहार

: उपसंहार :

हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में प्रभाकर माचवे बहुमुखी प्रतिभासंपन्न साहित्यकार के रूप में प्रतिष्ठित हैं। साहित्य की विभिन्न विधाओं में आपने विपुल लेखन किया है। अत: हिन्दी साहित्य क्षेत्र में आपका योगदान महत्वपूर्ण माना जाता है। माचवे प्रयोगधर्मी साहित्यकार हैं। परम्परा की लीक से हटकर अलग ढंग का अपना नया मार्ग ग्रहण करना आपकी विशेषता है। उपन्यास के क्षेत्र में भी आपने प्रयोगशीलता का परिचय दिया है। आपने अब तक सत्रह उपन्यास लिखकर अपनी विशिष्ट प्रतिभा का परिचय दिया है। इनमें से आठ उपन्यास नायिकाप्रधान हैं। प्रस्तुत शोध प्रबंध में १९५२ से लेकर १९७८ तक के `द्वाभा`, `एकतारा`, `दर्द के पैबन्द`, `लक्ष्मीबेन`, `कहाँ से कहाँ` आदि पांच प्रमुख नायिका-प्रधान उपन्यासों का अनुशीलन किया गया है। इस शोध कार्य के दौरान किए गए अध्ययन से यह बात स्पष्ट रूप से अभिव्यंजित होती है कि, आपके नायिकाप्रधान उपन्यास अन्य उपन्यासों की अपेक्षा संख्या में कम होने के बावजूद भी प्रभाव की दृष्टि से श्रेष्ठ साबित होते हैं।

माचवे जी के उपन्यासों में विशेष रूप से मानव जीवन के परिप्रेक्ष्य में युग की सामयिक समस्याओं की अभिव्यंजना हुई है। यथार्थ का अंकन आपके साहित्य की विशेषता है। माचवे जी ने अपने नायिकाप्रधान उपन्यासों में नारी जीवन की ज्वलंत समस्याओं को उठाकर अपने मानवतावादी दृष्टिकोण का परिचय दिया है। साहित्य हो या समाज हो, कहीं भी ये उत्पीडन के खिलाफ हैं। नारी को वैधानिक रूप से प्रगति के समान अवसर प्राप्त होने के बावजूद भी प्रत्यक्ष व्यवहार में उसके साथ दोहरे मानदण्डों की नीति अपनायी जाती है। इसीलिए नारी पर होते आये इन अत्याचारों के खिलाफ माचवे जी ने अपनी लेखनी चलायी है। माचवे जी ने अपने उपन्यासों के माध्यम से नारी के प्रति सहानुभूति नहीं दर्शायी, बल्कि उसमें प्रेरणा एवं स्फूर्ति का संचार करने का प्रयास किया है।

सर्जक और उसकी कृतियों में बहुत गहरा परस्पर सम्बन्ध रहता है। वस्तुत: सर्जक का पूरा प्रतिबिम्ब ही उसकी कृतियों में उभरकर आता है। इसलिए प्रस्तुत शोध प्रबंध के प्रथम अध्याय में माचवे जी के व्यक्तित्व एवं कृतियों का अध्ययन किया गया है। इनके व्यक्तित्व गठन में इनके परिवार - जनों के योगदान का परिशीलन किया गया है। साथ ही इनके सम्पूर्ण उपन्यास साहित्य का संक्षेप में परिचय भी दिया है।

दूसरे अध्याय में माचवे जी के प्रमुख नायिका-प्रधान उपन्यासों की कथावस्तु संक्षेप में दी है। ये उपन्यास प्राय: मध्यम वर्गीय नारी-जीवन की समस्याएँ प्रस्तुत करते हैं। `आभा` की आभा की यह समस्या है कि उसके व्यक्तित्व के अवरोध के लिए विशेष रूप से उसका पति,श्री जिम्मेदार है, क्योंकि उसमें एकनिष्ठता का अभाव है। आभा का पति आभा को त्यागने के बाद अनेक स्त्रियों के मोहपाश में उलझता है लेकिन आभा का सत्यकाम के प्रति आकर्षित होना समाज के प्रचंड रोष,एवं निंदा का कारण बन जाता है। इसलिए आभा स्त्री-पुरुषों के संबंध में अपनाए जानेवाले इन दोहरे मानदण्डों के खिलाफ विद्रोह करती है। वह प्राचीन संस्कारों में बुरी तरह जकड़ी हुई है। इसीलिए वह एक ओर अपने छली एवं प्रवंचना देनेवाले पति की पूजा करती है, तो दूसरी ओर आधुनिक विचारों के कारण पति के अत्याचारों के खिलाफ विद्रोह करती है। अतीत की मिथ्या जकड़न और वर्तमान की अस्थिर मूल्यवत्ता के बीच आभा टूटती जाती है। `एकतारा` की तारा भारतीय समाज की उस व्यवस्था के खिलाफ आवाज उठाती है, जिसमें आज भी नारी के लिए पिता,पति और पुत्र आदि अभिभावकों की निरंतर आवश्यकता बताते हैं। इसके प्रतिपक्ष में माचवे जी ने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि, नारी यदि आज के समाज में अकेले रहने लगी,तो उसे किसप्रकार मुसीबतों का पहाड़ उठाना पड़ता है। इसी अकेले रहने की प्रक्रिया में तारा टूटती जाती है। `लक्ष्मीबेन` आधुनिक विघटनात्मक समाज में दोहरा जीवन जीनेवाली परित्यक्ता की करुणाजनक कहानी है। `कहाँ से कहाँ` उपन्यास समाज, देश तथा विश्व में बढ़ती विभाजनवादी प्रवृत्तियों की समस्या का गंभीर चिंतन प्रस्तुत करता है।

प्रस्तुत नायिकाप्रधान उपन्यासों के माध्यम से माचवे जी ने वर्तमान समाज में नारी की यथार्थ स्थिति अंकित की है। इन उपन्यासों की कथावस्तु से यह ज्ञात होता

है कि, नारी की सद्यस्थिति और नारी की शक्ति का बोध कराने के उद्देश्य से ही माचवे जी ने इन उपन्यासों का सृजन किया है। आज स्त्री-पुरुष समानाधिकार के युग में भी समाज में नारी को उचित स्थान नहीं मिला है, यह कटु-सत्य माचवे जी के मन में अखरता है।

तृतीय अध्याय में विवेच्य उपन्यासों की नायिकाओं के चरित्र-चित्रण पर विवेचन किया गया है। यहाँ इन नायिकाओं की चारित्रिक विशेषताओं का विस्तार से अनुशीलन किये जाने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि, इन नायिकाओं की समस्या लगभग एक-सी होने के बावजूद भी हर एक का अपना चारित्रिक वैशिष्ट्य अलग रूप से उभरकर आता है। इसका कारण यह है कि ,इनके चरित्र की अपनी कमजोरियाँ हैं, अपनी कामनाएँ हैं, अपनी जीवनदृष्टि है। इसीलिए ये नायिकाएँ पाठकों पर अपना वैशिष्ट्य पूर्ण प्रभाव जमाने में कामयाब होती है।

विवेच्य उपन्यासों की सभी नायिकाएँ उच्चशिक्षा प्राप्त हैं। इससे यह स्पष्ट है कि, ये बुद्धिजीवी नारियाँ हैं। अत: इनमें स्त्री-जाति पर परम्परा से होते आये अन्यायों के खिलाफ चेतना जाग उठी है। ये इस अन्याय के खिलाफ विद्रोह करती हैं, लेकिन यह विद्रोह सिर्फ वैचारिक तौर पर है। अधिकतर नारियाँ जैसे कि, आभा, तारा, रता तथा लेखा आदि नायिकाएँ परित्यक्ताएँ हैं। इनके निर्दोष होने के बावजूद भी इनके पतियों ने इन्हें चारित्र्यहीन कह कर इनको त्याग दिया है। अत: इस अन्याय के खिलाफ सभी नारियाँ आवाज उठाती हैं। लेकिन इनके व्यक्तित्व का एक दूसरा पहलू भी है कि, इनमें परम्पराओं, रूढियों के खिलाफ खुलकर विद्रोह करने का साहस भी नहीं है। अर्थात् प्राचीन संस्कारों की जकडन इनपर इतनी मजबूत है कि, ये उससे छुटकारा नहीं पा सकतीं। इसी कारण इन दो परस्पर विरोधी विचारधाराओं के कारण इनमें अन्तर्द्वन्द्व छिड़ जाता है। इससे यह स्पष्ट है कि ये नायिकाएँ पूर्णत: परम्परागत नायिकाएँ नहीं हैं, परंतु आधुनिक स्वतंत्र विचारों की चिनगारी इनमें अवश्य है।

. गया
प्रस्तुत नायिकाओं की ओर देखने का पुरुष का दृष्टिकोण ... गयी हैं।
का-सा है। ये स्वयं प्राय निर्दोष होने के बावजूद भी पतियों ...

अत: वे समूचि पुरुष जाति के खिलाफ अपना विद्रोह प्रकट करती हैं। `ड्रामा` की आभा अपने पति तथा सारी पुरुष जाति को उसकी अस्थिरता, चंचलता तथा प्रवंचक वृत्ति के कारण कोसती है। उसका कहना है कि नारी की ओर देखने की सभी पुरुषों की दृष्टि एक-सी है, जो प्रेम के निकृष्ट रूप को उजागर करती है। `एकतारा` की तारा तो पुरुष जाति की नारी के प्रति भोगलिप्सा के कारण पुरुष-द्वेषिनी बन जाती है। ये नायिकाएँ पुरुष के अत्याचार की शिकार बनी हैं। अत: इनके अन्दर विद्रोह का लावा फूटता है।

इन नायिकाओं के पति इन्हें त्यागने के बाद अन्य स्त्रियों के माध्यम से अपनी काम-लालसा की तृप्ति करते हैं। फिर भी सभ्य समाज में सफेद कपडों की लकदक इस्त्रीबंद खोल में अपने आपको अधिक नीतिमान एवं सभ्य कहलाते फिरते हैं। दो-दो, तीन-तीन ब्याह करने के बावजूद भी इनकी प्रतिष्ठा में कोई आँच नहीं आती। इसप्रकार इन पुरुषों की नैतिकता बिगडी जाने पर भी वे स्वयं को सभ्य कहलाते हैं, जबकि ये नायिकाएँ, इनके पति द्वारा त्यागी गयीं इसलिए इन्हें चारित्र्यहीन कहा जाता है। इनके पति स्वयं अनैतिक होते हुए भी इनकी चारित्र्यहीनता को लेकर अफवाहें फैलाते हैं। इसलिए ये नारियाँ समाज में अपनी दीन-हीन स्थिति को देखते हुए इन रूढ, परंपरागत और खोखली नैतिक धारणाओं के खिलाफ विद्रोह करती हैं। इनमें स्थित अपने अस्तित्व बोध की चिनगारी भड़क उठती है। अत: आभा, तारा, कृता, रीटा तथा लेखा आदि नायिकाएँ स्त्री-पुरुषों के संबंध में बरताये जानेवाले इन दोहरे मानदण्डों के खिलाफ विद्रोह करती हैं। इनका कहना है कि दोनों मानव हैं, दोनों की भूख-प्यास एक-सी है, फिर क्यों समाज नारी जाति के प्रति अन्याय करता आया है? आभा कहती है कि, समाज में प्रतिष्ठा और गौरव से लदे वे लोग घूमते हैं, जो स्त्रियों के प्रति जिम्मेदारी का व्यवहार नहीं करते और बेचारी निर्दोष स्त्रियाँ दुराचारिनी, पापिनी कहलाती हैं।

विवेच्य नायिकाओं में से अधिकतर नायिकाएँ परित्यक्ताएँ तथा ...
छली गयी नारियाँ हैं। इनके साथ इनके पतियों ने दुर्व्यवहार किया है ...
के बाद भी अपनी व्यभिचारी वृत्ति नहीं छोडी है। लेकिन इन नायि...
यह है, कि ये पतिद्वारा छली जानेपर भी स्वयं नैतिक मर्यादाओं क...

अपनी चारित्रिक शुद्धता बनाए रखती हैं। ये नारियाँ भारतीय संस्कारों का उल्लंघन नहीं करतीं। इससे यह स्पष्ट होता है कि, भाचवे जी पर भारतीय संस्कारों का गहरा प्रभाव है। अतएव वे चित्रित करते हैं कि, ये नायिकाएँ अन्याय सह कर भी उसके प्रतिक्रिया स्वरूप नैतिक रूप से भ्रष्ट नहीं होतीं। आभा इसकी अपवाद है, जो पति द्वारा त्यागी जानेपर सत्यकाम के प्रति आकर्षित होती है।

समाज में परित्यक्ता नारी की ओर देखने का दृष्टिकोण अत्यन्त हीन स्तर का है। यद्यपि ये नायिकाएँ स्वयं निर्दोष हैं, इनका नैतिक आचरण शुद्ध है, फिर भी समाज इन्हीं को कलंकिता एवं दोषी ठहराता है। अत: ये नायिकाएँ यह प्रश्न उठाती हैं कि, समाज में परित्यक्ता नारियों का स्थान कौनसा है ? क्या उनकी इस स्थिति के लिए पूर्णत: वे ही जिम्मेदार है ?

`दर्द के पैबन्द' की रीटा और `कहाँ से कहाँ' की विभा का चरित्र इन नायिकाओं से अलग है। रीटा एक विदेशी युवती है, जो भारत की गौरवशाली परम्परा से अभिभूत होकर यहाँ आयी है। भारतीय जनसामान्यों के दुखों से वह भी दुखी बन जाती है। इससे स्पष्ट है कि, उसमें विश्वबंधुत्व की भावना मिलती है। `कहाँ से कहाँ' की विभा का व्यक्तित्व भी वैशिष्ट्यपूर्ण है। वह भी देश-प्रेम तथा विश्वबंधुत्व की भावना से अभिभूत है।

इन सभी नायिकाओं की विशेषता यह है कि, इनके रिश्तों का दायरा अत्यंत सीमित है। सभी नायिकाएँ अधिकतर पुत्री, मित्र, पत्नी एवं माता- इतनी ही भूमिकाएँ निभाती हैं। इसका कारण यह है कि, भाचवे जी इनके पति-पत्नी के संबंधों पर ही अधिक विस्तार से विचार करना चाहते हैं। इसी संबंधों में बढ़ती समस्याओं का चित्रण करना इनका प्रमुख उद्देश्य है, इसलिए इन नायिकाओं के रिश्तेदारी का दायरा सीमित है।

प्रस्तुत उपन्यासों में चित्रित सभी नायिकाएँ पारिवारिक सुखी जीवन बिताना चाहती हैं। पति एवं सन्तान के सुख में अपना सुख मानना चाहती हैं। लेकिन सिर्फ

पति के कारण ही इन्हें परित्यक्ता का जीवन भुगतना पड़ता है। इनकी विशेषता यह है कि, पति का अनैतिक आचरण देखकर भी अपनी ओर से ये नारियाँ तलाक देने की बात नहीं करतीं। बल्कि उनके पति ही, स्वयं अनैतिक होने के बावजूद इन्हें तलाक देते हैं। इससे यह बात लक्षित होती है कि, माचवे जी इस बात की ओर समाज का ध्यान खींचना चाहते हैं, कि नारियाँ स्वयं अपने पारिवारिक जीवन में या दाम्पत्य जीवन में विघटन नहीं लाना चाहतीं। वे किसी भी स्थिति से समझौता करके स्वस्थ एवं सुखी जीवन बिताने की आशा रखती हैं।

ये नायिकाएँ बुद्धिजीवी वर्ग की होने से उनमें चिन्तनशील प्रवृत्ति है। वे अपनी स्थिति के संबंध में सोचती हैं, तो समाज में नारी की दलित एवं करुणाजनक स्थिति देखकर उन्हें पीड़ा होती है। इसलिए वे सोचती हैं, कि क्या ज्ञान पाने का अर्थ ही अधिक दुखी होना है ? वे अपने आपको ज्ञान मयी नहीं, बल्कि अधिक उदास पाती हैं।

प्राय: सभी नारियाँ आर्थिक स्वतंत्रता पाने का प्रयास करती हैं, लेकिन इस प्रयास में असफल होती हैं। अत: वे मानसिक,शारीरिक तथा आर्थिक आधार पाने के प्रयास में विवाह करती हैं। और जब वैवाहिक जीवन में असफल बन जाती हैं, तब ये नायिकाएँ गुजारा चलाने के लिए नौकरी प्राप्त करती हैं। `दर्द के पैबन्द` की रीटा और `कहाँ से कहाँ` की किरा आर्थिक दृष्टि से स्वयंपूर्ण नारियाँ हैं। वे कहीं आर्थिक आधार पाने का प्रयास नहीं करतीं और न ही इस उद्देश्य से विवाह करती हैं। इससे एक बात लक्षित हो जाती है कि, माचवे जी का इशारा नारी के आर्थिक रूप से स्वयंनिर्भर होने की ओर है। क्योंकि नारी जब इसप्रकार स्वयंनिर्भर नहीं होती,तब वह पुरुष के अत्याचार की अनायास ही शिकार बन जाती है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के चतुर्थ अध्याय में इन नायिकाओं के मानसिक अन्तर्द्वन्द्व का तथा उसके कारणों का विस्तार से विवेचन किया गया है। यहाँ एक बात उल्लेखनीय है कि, सभी नायिकाएँ किसी न किसी प्रकार के अन्तर्द्वन्द्व से ग्रस्त हैं। नायिकाओं के चरित्र-चित्रण के संबंध में इस बात का उल्लेख किया गया है कि ,ये सभी नायिकाएँ उच्चशिक्षाप्राप्त होने से इनमें बौद्धिकता झलकती है। आमतौर से यह देखा

जाता है कि, बुद्धिजीवी नारियाँ अपनी वर्तमान स्थिति के प्रति सचेत होने के कारण संतुष्ट नहीं हैं। प्राचीन नायिकाएँ परम्परागत दायरे में बँधे रहने में ही अपनी सार्थकता मानती थीं। लेकिन आज नारी पर होते आए अन्यायों के कारण इनमें अपने हितों के प्रति सतर्कता आयी है। इसीलिए ये अपने अस्तित्व-बोध के कारण अन्याय के खिलाफ विद्रोह करती हैं। समाज में स्त्री-पुरुषों के प्रति रूढ दोहरे मानदण्ड, रूढ नैतिक धारणाओं के खिलाफ ये असंतोष व्यक्त करती हैं। लेकिन जहाँ ये नारियाँ बुद्धिजीवी होने से पूर्णत: परम्परागत नहीं हैं, वहीं वे पूर्णत: आधुनिक भी नहीं हैं। इनपर हमारी प्राचीन परम्परा की जकड़न इतनी मजबूत है कि, इनके चाहने पर भी ये उससे पूर्णरूप से अलग नहीं हो पातीं, इसलिए इनमें प्राचीन और आधुनिक मान्यताओं में अन्तर्द्वन्द्व छिड जाता है। `ड्रामा` की आभा की यह कमजोरी है कि वह एक भारतीय नारी होने से प्राचीन संस्कारों के जाल में उलझाकर, पति द्वारा छली जाने पर भी पतिनिष्ठा निभाती है। लेकिन उसके मन का दूसरा पहलू भी है, जो पति के अत्याचार सहकर विद्रोही रूप धारण किए हुए है। इसलिए वह अन्तर्द्वन्द्व से पीड़ित है। `एकतारा` की तारा आदर्श और यथार्थ, उचित और अनुचित तथा नैतिक और अनैतिक के द्वंद्व से ग्रस्त है। `दर्द के पैबन्द` की दोनों नायिकाएँ पूर्व और पश्चिमी संस्कारों के द्वंद्व से ग्रस्त हैं। `लक्ष्मीबेन` की लेखा के सामाजिक और व्यक्तिगत जीवन में अंतर्विरोध है। वह परित्यक्ता होने से पारिवारिक सुख से वंचित है लेकिन वह बाहरी समाज से अपनी व्यथा छिपाने की कोशिश करती है। इस तरह वह अपने ही मन की प्रतारणा करते हुए दोहरा जीवन यापन करती है। विभा के मन में देश और विश्व में विभाजन के विघटनकारी तत्वों के कारण द्वंद्व पैदा होता है।

इन नायिकाओं के अन्तर्द्वन्द्व का प्रमुख कारण प्राचीन संस्कारों की जकड़न और दूसरी ओर इनमें जगनेवाली आधुनिक चेतना। माचवे जी यहाँ एक बात स्पष्ट करना चाहते हैं, कि इसप्रकार की धारणाओं में परिवर्तन होने की आवश्यकता है, जो नारी की शारीरिक पवित्रता को काँच के बर्तन की तरह मानते हैं। इसप्रकार के नैतिक मानदण्डों में, जो नारी से अत्यधिक शुद्धि की अपेक्षा रखते हैं, जबकि पुरुष लाख अपराध करने पर भी निष्कलंक एवं सभ्य कहलाता है - परिवर्तन होना आवश्यक है।

प्रस्तुत शोध प्रबंध के अध्ययन प्रारंभ में जो प्रश्न मेरे मन में उपस्थित हुए थे, उनका समाधान इसप्रकार दिया जा सकता है ---

(१) प्रस्तुत नायिकाओं की व्याप्ति के संबंध में यह कहा जा सकता है, कि अधिकतर नायिकाएँ प्राय: भारतीय हैं। लेकिन दर्द के पैबन्द की नायिका आस्ट्रेलियन होने से इस संबंध में यह निष्कर्ष दिया जा सकता है कि, माचवे जी के उपन्यासों में नायिकाओं की व्याप्ति अंतर्राष्ट्रीय सीमा तक है।

(२) माचवे जी ने इन नायिकाओं के माध्यम से परित्यक्ता नारी - जीवन की अनेक समस्याओं को प्रस्तुत किया है। समाज-पुरुषों द्वारा स्त्री-पुरुष के संबंध में अपनाए जानेवाले दोहरे मानदण्डों की नीति, नारी की चारित्रिक शुद्धता के संबंध में रूढ धारणाएँ आदि समस्याओं को माचवे जी ने विस्तृत रूप से प्रस्तुत किया है।

(३) प्रस्तुत नायिकाओं में से आभा, ऋता, तथा लेखा आदि नायिकाएँ अपनी ही समस्याओं में पूर्णरूप से उलझी हुई हैं। तारा अपने विवाह - पूर्व जीवन में देशप्रेम से अभिभूत है। वह अपना यौवन का अमूल्य समय देशकार्य के लिए व्यतीत करती है, लेकिन विवाह के बाद दाम्पत्य जीवन की समस्याओं में वह उलझती है। रीटा के चरित्र के संबंध में यह कहा जा सकता है कि, वह वैयक्तिक जीवन से अधिक सामाजिक जीवन के दु:खों से पीड़ित है। विदेशी युवती होने पर भी उसमें भारतीयों के प्रति प्रेम है। अत: यह कहा जा सकता है कि, उसमें विश्वबंधुत्व की भावना निहित है। विभा भी देशप्रेम तथा विश्वबंधुत्व की भावना से अभिभूत है। इसप्रकार यह कहाँ जा सकता है कि, आभा, ऋता और लेखा अपनी ही समस्याओं में उलझी हुई है। लेकिन तारा रीटा और विभा वैयक्तिगत समस्याओं की अपेक्षा राजनीतिक व सामाजिक समस्याओं को महत्वपूर्ण मानती है।

(४) प्रस्तुत नायिकाओं के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि, इनमें सूक्ष्म विकासशील परम्परा का क्रम देखने को मिलता है। आभा में प्राचीन और

पुरातन का द्वंद्व चरम सीमापर है, जिसके कारण वह अन्दर से टूटती है। पुरुष से प्रवंचना पाने का दु:ख वह सह नहीं पाती और मृत्यु का वरण करती है। तारा भी अपने पति से प्रवंचना पाकर टूट जाती है। कृता पति एवं पुत्र को खो देने से दु:खी बनती है लेकिन उसका यह लक्ष्य है कि, ' जब तक सोस है, तब तक संघर्ष है।' इसलिए वह स्वयं को सँभल पाने की कोशिश करती है। लेखा भी पति द्वारा छली गयी है लेकिन वह एक संकल्पवान नारी होने से अपनी भीतरी चुभन तथा दर्द छिपाने की कोशिश करती है।

ये नायिकाएँ उत्तरोत्तर अपनी जिन्दगी में छली जाने के बाद भी अपनी व्यथा को काबू में रखकर इससे उबरने की कोशिश करती हैं। इन सभी में पारिवारिक सुखपूर्ण जिन्दगी यापन करने की ललक है और वह विभा में पूरी हुई है ऐसा दिखाई देता है। विभा विवाह करती है लेकिन वह स्वय अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व बनाए रखती है। वह पति पर निर्भर नहीं, आर्थिक स्वयंनिर्भरता उसमें है। पति के साथ उसके संबंध बराबरी एवं समान स्तर के हैं। विभा के चरित्र का यह वैशिष्ट्य ही उसकी अलग पहचान करा देता है कि, वह इन पूर्व नायिकाओं के समान प्राचीन और आधुनिक मान्यताओं के द्वंद्व से ग्रस्त नहीं है। इसप्रकार उसकी दृष्टि साफ है।

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि, माचवे जी नारी के लिए आर्थिक स्वयंनिर्भरता आवश्यक मानते हैं। विभा में इस बात की पूर्ति मिलती है। इसीलिए वह अपने वैवाहिक जीवन में भी सुखी है। माचवे जी का यह एकमात्र सुखान्त उपन्यास है, जिसके माध्यम से वे समाज के सामने आदर्श रखना चाहते हैं।

लेखक का नारी के प्रति दृष्टिकोण ---

माचवे जी नारी को 'शक्ति' मानते हैं। इसीलिए वे चाहते हैं कि, परम्परा से नारी का पुरुष जाति द्वारा मानसिक, शारीरिक तौर पर शोषण चल रहा है, उससे नारी मुक्त हो। अत: अपने इन नायिका प्रधान उपन्यासों के माध्यम से समाज के

सामने नारी की वर्तमान दीन स्थिति दिखलाकर समाज को गंभीरता से इसपर विचार करने के लिए मजबूर कर देते हैं। वे नारी को सहानुभूति नहीं दिखाते, बल्कि उसमें एक अद्भुत प्रेरणा तथा स्फूर्ति का संचार करते हैं। नारी को उसके अपने अधिकार प्राप्त करने के लिए सचेत कर देते हैं।

••